3

अपनी समस्याओं पर काबू कैसे पाएं (1:5-11)

आज के संसार की सबसे डराने वाली खूबियों में बच्चों के पालन-पोषण, भविष्य का सामना, ठगने की भावना की समस्या का सामना और समय होने के बावजूद और उसे बिताने के ढंग का पता न होने की समस्या जैसी परिस्थितियों का सामना करने के लिए सहारे की आवश्यकता है। लोगों को लगता नहीं है कि वे मुश्किल से गुज़ारा करने की कठिनाई, बीमारी के खतरनाक प्रहार या अपने प्रियजनों की खोने की बौखलाहट का सामना कर पाएंगे। दोष दर्शी कह सकता है कि ''क्या मृत्यु के बाद जीवन है?'' के प्रश्न की जगह ''क्या मृत्यु से पहले *जीवन* है?'' के प्रश्न ने ले ली है।

आम तौर पर हमें जीवन की परेशानियों का सामना करना कठिन लग सकता है। इस स्थिति को हम बाइबल के अनुसार आदम के पाप से संसार में आने वाली त्रासदियों, बीमारियों, परीक्षाओं और मृत्यु से समझा सकते हैं। विश्वासी हों या अविश्वासी सब को एक जैसी परीक्षाओं और विपत्तियों का सामना करना पड़ता है। इस स्थिति को हम यह कहकर भी समझा सकते हैं कि जीवन की परीक्षाएं हमारे विश्वास की परख करके हमारे धीरज को बढ़ाती हैं ताकि हम परिपक्व और पूर्ण बन सकें। परन्तु सदमा पहुंचाने वाली ऐसी घटनाओं में से किसी के आ जाने पर हम बाइबल के इस दृष्टिकोण को भूल जाते हैं।

अपनी प्रसिद्ध व्यावहारिक शैली में लगता है कि याकूब को मालूम है कि उसके पाठकों के साथ और हमारे साथ क्या होगा। परीक्षाओं का उद्देश्य और उन परीक्षाओं से मिल सकने वाले परिणाम की बात करने के बाद वह बताता है कि उन पर विजय कैसे पाएं। ऐसा करके याकूब दिखाता है कि हमारे दैनिक जीवनों में हमारा मसीही विश्वास का कार्य कैसे होना चाहिए।

बुद्धि मांगो (1:5)

हम परीक्षाओं का सामना करने में नाकाम रहते हैं क्योंकि हम में बुद्धि की कमी है। बुद्धि क्या है? संदर्भ से बुद्धि चीज़ों को परमेश्वर के दृष्टिकोण से देखने की योग्यता है। परमेश्वर अपने सनातन दृष्टिकोण से हमें स्थिति को दिखाता है। यह हमें दिखाता है कि हर चीज़ कैसे मेल खाती है, यानी हमें प्रार्थना कैसे करनी है, हमें क्या करना है, हमें समस्या पर काबू कैसे पाना है और सबसे महत्वपूर्ण यह कि वह समस्या बढ़ने में हमारी कैसे सहायता कर सकती है।

बुद्धि की जिस किस्म की हम बात कर रहे हैं, वह केवल बाइबल का ज्ञान नहीं है। बाइबल के ज्ञान से व्यक्ति को जानकारी तो मिलेगी, परन्तु आवश्यक नहीं कि वह बुद्धिमान भी हो जाए। यदि किसी व्यक्ति को पता है कि जीवन को समझने और अपने व्यवहार की अगुआई तथा जीवन की समस्याओं के भूल-भुलैया में दूसरों के व्यवहार को चलाने के लिए बाइबल का *इस्तेमाल*

कैसे करना है, *तो* ज्ञान बुद्धि में बदल गया है।

इस जीवन के अपने व्यावहारिक ढंग से मेल खाते हुए से मेल खाती याकूब की शिक्षा में एक सुन्दर सीधापन और सादगी होती है। वह तो केवल इतना कहता है, ''तुम में इस बुद्धि की घटी है? परमेश्वर से मांगो तो वह तुम्हें बिना उलाहना दिए आनन्द से देगा।'' यूं करके! ऐसी सादगी या तो पूरी तरह से अवास्तविक है, या अपने सही होने को परमेश्वर के ज्ञान से ढूंढ़ लेती है। याकूब की नज़र में यह ज्ञान को ढूंढ़ना है। परमेश्वर की शिक्षा ऐसी है कि वह ऐसी नाटकीय प्रतिज्ञाएं कर सकता है और *जानता है* कि परमेश्वर उन प्रतिज्ञाओं को पूरा करेगा।

हम सबको यह पता होना चाहिए कि मांगे जाने पर परमेश्वर को बुद्धि देना अच्छा लगता है! इससे बिल्कुल मेल खाती बात पुराने नियम में सुलैमान को मिले अनुभव हर मसीही के लिए परमेश्वर की इच्छा में पाई जाती है। सुलैमान की कहानी याद करें (1 राजाओं 3)। उसके इस्राएल के राजा के लिए सेवा के ठहराए जाने के तुरन्त बाद, याहोवा ने उसे एक स्वप्न में दर्शन दिया और उसे कुछ भी मांगने का अवसर दिया। यहोवा इस बात से प्रसन्न था कि सुलैमान ने अपने लोगों का न्याय करने अर्थात भलाई और बुराई में अन्तर करने की ''समझ की शक्ति'' मांगी थी (1 राजाओं 3:9)। पवित्र शास्त्र से यह बिल्कुल स्पष्ट हो जाना चाहिए कि जब हम उसकी इच्छा पूरी करने के लिए बुद्धि मांगते हैं तो परमेश्वर *हमेशा* खुश होता है। वह ऐसी प्रार्थना का उत्तर देना चाहता है।

परमेश्वर हम से क्यों चाहता है कि हम ऐसी बुद्धि *मांगें*? क्योंकि प्रार्थना की हमारी मसीही समझ में, प्रार्थना में और अधिक मसीह जैसे बनने के लिए हमारी नैतिक कमियों और हमारी महत्वाकांक्षा का अंगीकार शामिल है। जब किसी मसीही को गलत काम करने (शराब पीने, नशे करने, अवैध शारीरिक सम्बन्ध में शामिल होने आदि) का अति दबाव सहना पड़ता है, या उसे पारिवारिक परेशानी या किसी प्रियजन की मृत्यु का सामना करना पड़ता है तो वह अपनी ही सामर्थ पर भरोसा करने के बजाय सहायता के लिए परमेश्वर से कहता है। उसकी प्रार्थना हो सकती है: ''हे परमेश्वर, मैं इसे नहीं सम्भाल सकता! पर तेरी सहायता से मैं इसे करूंगा और इसके लिए एक बेहतर व्यक्ति बनूंगा।'' यह प्रार्थना मसीही जीवन के स्वभाव से इतनी मेल खाती है, जो अपनी नहीं बल्कि परमेश्वर की सामर्थ पर भरोसा करता है।

अपने विश्वास को काम करने दें (1:6-8)

आयतें 6 से 8 पढ़ने पर हम अक्सर अपने आपको यह कहते हुए पाते हैं, ''पर हे याकूब, मैं तो संदेह से निकल नहीं पा रहा हूं।'' हमारे कहने का अर्थ यह नहीं है कि हमें उन सच्चाइयों पर संदेह है, जो मसीहियत का आधार हैं। उदाहरण के लिए परमेश्वर के अस्तित्व, यीशु का परमेश्वर मनुष्य बनना, पवित्र आत्मा के परमेश्वर का बल, यीशु के मुर्दों में से जी उठने, यीशु में विश्वास के द्वारा अनुग्रह से उद्धार, कलीसिया का जिसे यीशु ने बनाया प्राथमिक महत्व और मनुष्य के परमेश्वर की आज्ञा मानने वाला होने की आवश्यकता पर कोई संदेह नहीं है। हमें जो बात समझ नहीं आती वह यह है कि ''क्या परमेश्वर जीवन के कठिन समयों में हमारी सहायता के लिए अपनी सामर्थ का इस्तेमाल करेगा?'' वास्तव में बहुत बार हम अपने आपको मरकुस 9 वाले परेशान पिता से मेल खाता पाते हैं, ''हे प्रभु, मैं विश्वास करता हूं, मेरे अविश्वास का

उपाय कर'' (मरकुस 9:24)।

याकूब कह रहा है कि परमेश्वर में ऐसा कुछ नहीं है, जो उसे हमें निराशा के समय में बुद्धि देने से रोकता हो, बल्कि वह रुकावट हमारे अपने अन्दर हो सकती है। इसी लिए वह कहता है, ''पर विश्वास से मांगे, और कुछ सन्देह न करे ...'' (1:6)। उसके कहने का अर्थ केवल परमेश्वर में विश्वास करना नहीं है, क्योंकि वह विश्वासियों को ही लिख रहा है, बल्कि यह विश्वास करना है कि वही करेगा, जो विश्वासी बालक करते हैं और अपने बच्चों की दोहाई को सुनेगा।

इन संघर्षों में हमारे सामने कम से कम दो समस्याएं हो सकती हैं। पहली यह कि हो सकता है हमें पता न हो कि *मांगना* क्या है। परेशानी के समय क्या हम परमेश्वर से यह नहीं मांगते कि वह हमारी परेशानी दूर कर दे। पर याकूब यह नहीं कहता। वह केवल ''बुद्धि'' मांगने के लिए कहता है ताकि जीवन की परेशानियों से हम परिपक्व होने के योग्य हो जाएं। दूसरा, हो सकता है कि हमें यकीन न हो कि अपनी परेशानियों से निकलने के लिए परमेश्वर की सहायता से कुछ लाभ हो सकता है। ऐसी स्थिति के वर्णन के लिए याकूब कुछ अभिव्यक्तियों का इस्तेमाल करता है। आयत 6 में वह कहता है, ''... संदेह करने वाला समुद्र की लहर के समान है, जो हवा से बहती और उछलती है।'' समुद्र की लहरें पूरी तरह से हवा के रहमो-करम पर हैं, जो उन्हें जिधर चाहे बहा ले जाती हैं। परन्तु बेहतर विवरण आयत 8 में है। यह कहती है कि संदेह करने वाला व्यक्ति ''दुचित्ता'' है। यहां प्रयुक्त हुए यूनानी शब्द का अर्थ मूलतया ''दो-मना'' है। यह तो ऐसा है जैसे एक मन घोषणा करता है, ''मैं विश्वास करता हूं,'' और दूसरा उसके उलट पुकार उठता है, ''मैं नहीं करता।'' बंटी हुई निष्ठा वाले व्यक्ति को कई बार लगता है कि शायद परमेश्वर उसकी सहायता करेगा, और कई बार वह उस आशा को छोड़ देता है, जिससे उसे कोई समाधान मिलता दिखाई नहीं देता। ऐसा व्यक्ति बनियन *पिल्ग्रिम्ज़ प्रोग्रेस* नामक के उत्कृष्ट रूपक वाले ''मि. लुक-बोथ-वेज़'' से मेल खाता है।

यदि हम परमेश्वर पर भरोसा रखते हैं तो हम इस बात को समझते हैं कि हमें पता चलने से पहले ही कि यह क्या उसका ढंग बेहतरीन है। यदि हम इस प्रकार के विश्वास के साथ उससे बुद्धि मांगते हैं, तो हमें यह अवश्य मिलेगी। परमेश्वर की बुद्धि से हम दिलेरी के साथ आगे बढ़ सकते हैं।

गलत बातों पर निर्भर न रहें (1:9-11)

कई विद्वान 9 से 11 आयतों को पूरी तरह से नये विषय का परिचय देने वाली मानते हैं। परन्तु संदर्भ वाली सामग्री का सम्बन्ध जीवन की परीक्षाओं में स्थिर रहने के साथ है इसलिए इन आयतों को उसी सामान्य विषय से जुड़ी समझना सबसे बढ़िया है।

हम आमतौर पर जीवन की परेशानियों से इतना घिर जाते हैं कि हम अपना भरोसा सांसारिक वस्तुओं पर रखने लगते हैं। ''धनवान'' भाई अपने धन को अपनी सुरक्षा के रूप में देखता है, जब कि ''निर्धन'' भाई कहता है कि धन की कमी के कारण ही वह जीवन की कठिनाइयों को दूर नहीं कर पाता। याकूब यह संकेत देता प्रतीत होता है कि ''परीक्षाएं'' किसी प्रकार के काल्पनिक अन्तरों को मिटाकर धन पर नये दृष्टिकोण देती हैं।

सबसे पहले तो ''ऊंचे पद'' जिस पर निर्धन भाई को ''घमण्ड'' करना है वह मसीह में उसकी स्थिति है। उसे बचाकर परमेश्वर उसे ऊपर उठाकर नई शान और महत्व देता है। उसे समझ आता है कि वह परमेश्वर, कलीसिया और संसार के काम का है। परन्तु इस संदर्भ में यह संभावना अधिक लगती है कि याकूब के मन में ''मसीह के लिए दुख उठाने का सौभाग्य'' था। बाइबल इस प्रकार की शिक्षा से भरी पड़ी है (प्रेरितों 5:41; 2 तीमुथियुस 3:12; 1 पतरस 4:16)। यीशु के लिए सताव सहना मसीही व्यक्ति को सम्मान की उस स्थिति पर पहुंचा देता है, जो उसकी निर्धनता को दूर करने से कहीं अधिक है।

वही व्यवहार जो निर्धन व्यक्ति को ऊंचा करता है और उसे महत्व की एक नई समझ देता है, धनी व्यक्ति को दीन भी करता है। कष्ट सहने से उसे समझ आता है कि अपनी धन और सम्पत्ति के कारण जीवन पर सदा तक बनी रहने वाली चीज़ के बजाय, उसका जीवन अब जंगली फूल की तरह स्थायी नहीं है। इसलिए याकूब कहता है:

> और धनवान अपनी नीच दशा पर: क्योंकि वह घास के फूल की नाईं जाता रहेगा। क्योंकि सूर्य उदय होते ही कड़ी धूप पड़ती है और घास को सुखा देती है, और उसका फूल झ ड़ जाता है, और उसकी शोभा जाती रहती है; उसी प्रकार धनवान भी अपने मार्ग पर चलते धूल में मिल जाएगा (1:10, 11)।

सारांश

हम अपनी समस्याओं से कैसे निपटते हैं? अपनी ही सामर्थ से? अपनी सांसारिक सम्पत्ति से? यदि हां तो जीवन हमारे लिए एक के बाद एक कुचल डालने वाला प्रहार होगा! जब हम अपने आपको दीन बनाना नहीं सीखते और इस विश्वास के साथ कि परमेश्वर हमारी सहायता करेगा, उससे सहायता नहीं मांगते, तब तक हमारी परेशानियां हमें घेरे रहेंगी।